ORIGINAL RESEARCH PAPER

Hindi

KEY WORDS:

भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा में रीतिकालीन आचार्यों का योगदान : चिंतामणि और देव के परिप्रेक्ष्य में

Ravi Kumar student (m.a hindi) (net hindi

प्रस्तावना :–

भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा बहुत प्राचीन एवं समृद्ध रही है। काव्यशास्त्र में काव्य के अंगों, सिद्धांतों और लक्षणों का विवेचन किया जाता है ।काव्यशास्त्र की लिखित रूप में शुरुआत भरत मुनि ने (समय दूसरी ईसा पूर्व से लेकर दूसरी सती के बीच)"नाट्यशास्त्र" नामक ग्रंथ लिखकर की। भरत मुनि ने "नाट्य शास्त्र" ग्रंथ में नाटक के तत्व, अलंकारों, गुण दोषों, काव्य हेतु, काव्य प्रयोजन,काव्य की आत्मा, नाट्य वृत्तियों एवं रस सूत्र का निरूपण किया। भरत मुनि का रस सूत्र इस प्रकार है :–

विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पति(1)

इसी रस सूत्र की व्याख्या परवर्ती आचार्यों ने की और रस संप्रदाय को समृद्ध किया। भरत मुनि ने रसों के देवताओं, वर्णों, स्थायी भाव, संचारी भाव, अनुभाव, विभाव आदि का सूक्ष्म विवेचन किया। अलंकार संप्रदाय का प्रतिपादन भामह ने छठी शताब्दी के मध्यकाल में किया। भामह से पूर्व भरत मुनि ने भी चार अलंकारों की चर्चा की परंतु काव्य की आत्मा के रूप में अलंकार को भामह ने प्रतिष्ठित किया। संस्कृत काव्यशास्त्र में रस सिद्धांत, अलंकार सिद्धांत, गुण सिद्धांत, रीति सिद्धांत, वक्रोक्ति सिद्धांत और ओचित्य सिद्धांत आदि प्रमुख सिद्धांत हुए। भरतमुनि, दंडी, बामन, रूद्रट, अभिनव गुप्त, राजशेखर, कुंतक, मम्मट, विश्वनाथ और जगन्नाथ आदि प्रमुख संस्कृत आचार्य हुए जिन्होंने काव्य की आत्मा, काव्य के लक्षण, काव्य प्रयोजन, काव्य हेतु, काव्य के गुण दोष आदि पर विस्तृत चर्चा करते हुए अपने अपने मत का प्रतिपादन किया। हिंदी भाषा में रीति विवेचन की प्रवृत्ति संस्कृत भाषा की देखा देखी आई है। संस्कृत आचार्य द्वारा तैयार की गई परिपाटी पर ही चल कर हिंदी आचार्यों ने रीति अन्वेषण की पद्धति को अपनाया।

रीति विवेचन की प्रवृत्ति भक्ति काल से ही आरंभ हो गई थी। रसमंजरी, साहित्य लहरी, तरंगिणी भूषण, करणाभरण, कविप्रिया, रसिकप्रिया आदि ग्रंथों में काव्य के किसी न किसी अंग का सांगोपांग निरूपण किया। भक्ति काल के पश्चात साहित्य राजाओं की जागीर बन कर रह गया। कवि राजाओं के आश्रय में रहकर कविता लिखने लगे और उनकी प्रशंसा में गीत गाने लगे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 17 वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी के साहित्य को रीतिकाल की संज्ञा दी क्योंकि इस समय में कवियों द्वारा रीति निरूपण के ग्रंथ लिखे गए।रीतिकाल की प्रमुख प्रवृतियां काव्यांग निरूपण, श्रृंगार वर्णन, अलंकार वर्णन, शब्द क्रीड़ा से चमत्कार प्रदर्शन, आश्रय दाताओं की प्रशंसा एवं भक्ति एवं वीर रस का निरूपण आदि। काव्यांग निरूपण करने वाले प्रमुख आचार्य केशवदास, चिंतामणि, देव, मतिराम, भूषण, ग्वाल, प्रताप साहि, भिखारी दास, आदि। इन्होंने अपने आश्रय राजाओं को काव्य के नियमों की शिक्षा देने के लिए रीति ग्रंथों की रचना की।रीति ग्रंथो की रचना करने का उद्देश्य कवियों की आजीविका से संबंधित था। इन ग्रंथों में रीतिकालीन आचार्य ने किसी भी मौलिक सिद्धांत या संप्रदाय का प्रतिपादन नहीं किया। परंतु फिर भी उन्होंने काव्य के लक्षण और उदाहरण देकर कवि कर्म को भलीभांति पुष्ट किया है।

चिंतामणि रसवादी आचार्य थे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने रीतिकाल के प्रवर्तक के रूप में मान्यता देते हुए कहते हैं "हिंदी रीति ग्रंथों की अखंड परंपरा चिंतामणि त्रिपाठी से चली थी"।(2) चिंतामणि त्रिपाठी ने शाहजहां और दारा शिकोह के आश्रय में रहकर कविता कर्म को पूरा किया। काव्यप्रकाश, काव्य विवेक, कविकुलकल्पतरु, छंदविचार और श्रृंगार मंजरी नामक ग्रंथों में काव्य के तत्व, काव्य के गुणों उसके दोषों, नायक नायिकाओं के भेदो, नवरसों का बड़े सूक्ष्म ढंग से विवेचन किया। स्वकिया, परकिया, प्रौढा,मुग्धा आदि नायिकाओं के उपभेदों का विवरण श्रृंगार मंजरी नामक ग्रंथ में दिया। चिंतामणि के अनुसार काव्य दोषों के कारण रसास्वादन नही हो पाता इसलिए रचना को काव्य दोषों से मुक्त रखना चाहिए। इन्होंने शब्ददोष,वाक्यदोष,अर्थ दोष, रस दोष चार प्रकार के दोषों का विवेचन किया है। चिंतामणि काव्यदोष के स्वरूप का वर्णन करते हो लिखते हैं :–

शब्द अर्थ रस को जु इत देखि परै अपकर्ष ।
दोष कहत हैं ताहि कौ सुने घटतु है हर्ष ॥(3)

कवि कुल कल्पतरु नामक ग्रंथ में 74 अलंकारों का निरूपण किया है। अलंकार चारुता का उद्देश्य केवल काव्य में चमत्कार उत्पन्न करना था। चिंतामणि ने लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों का विवेचन कर उसके उपभेदों का भी वर्णन किया है। इनके अलंकार निरूपण पर मम्मट विश्वनाथ आदि संस्कृत आचार्यों के मतों से प्रभावित है। चिंतामणि ने काव्य को एक पुरुष का प्रतीक मानकर उसके अंगों का विश्लेषण किया है।

सबै अर्थ तवु (नु) वर्णीये जीवित रस जिय जानि ।
अलंकार हारादि पे उपमादिक मन आनि ॥
############################

रस आस्वादन भेद जे पाक पाँक से मानि ॥
कवित पुरुष की साजु सब समुझ लोक का रीति ।(4)

आचार्य चिंतामणि ने छंद निरूपण से संबंधित भी एक लक्षण ग्रंथ की रचना की जिसमें उन्होंने मात्रिक एवं वार्णिक छंदों को लक्षण एवं उदाहरण सहित सरस एवं सहज ब्रज भाषा में प्रस्तुत किए। आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो चिंतामणि की पिंगल रचना साधारण कोटि की है। इसमें किसी नूतन छंदों का उल्लेख नहीं है और ना ही किसी मौलिक प्रतिभा का प्रतिपादन किया गया।

आचार्य कवि देव का पूरा नाम देवदत्त था। इनका संवत 1630–31 में उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद में ब्राह्मण परिवार में हुआ।ये किसी एक राजा या नवाब के आश्रय में टिक कर नहीं रहे। देव आजमशाह, कुशल सिंह, सेठ भोगीलाल, अली अकबर खान, आदि अनेक आश्रयदाताओं दरबार में रहे। देव ने कवि कर्म और आचार्य धर्म दोनों का निर्वाह किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 25 ग्रंथों के नामों का वर्णन किया। डॉ नगेंद्र ने देव द्वारा रचित 72 ग्रंथों की पुष्टि की है परंतु 12 ग्रंथों को ही उपलब्ध बताया है। देव के ग्रंथों को विषय वस्तु के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :– (1)रीति ग्रंथ/ काव्यशास्त्र ग्रंथ (2)काव्य ग्रंथ भावविलास, कुशल विलास, रस विलास, प्रेमचंद्रिका,भवानी विलास,देव शतक,राधिका विलास आदि ग्रंथों में काव्य के नियमों का विवेचन प्रस्तुत किया।अन्य काव्य रचनाएं जैसे देव मायाप्रपंच, प्रेमतरंग, जाति विलास, देवशतक, रागरत्नाकर, देवचरित्र,आदि की विषय वस्तु संस्कृति सभ्यता, धार्मिकता समाजिक जनजीवन, राधा कृष्ण के चरित्र चित्रण के माध्यम से आदर्श प्रेम की व्यंजना, संगीत, कला विधान की झांकी प्रस्तुत की है। इन्होंने पुराने ग्रंथों के पदों को इधर-उधर करके एक नये ग्रंथ का निर्माण कर दिया। इस कारण उनके बहुत से ग्रंथों में समान पद मिलते हैं। देव ने भाव विलास ग्रंथ में छल नामक संचारी भाव का मौलिक प्रतिपादन किया।

अपमानादिक करन को, कीजै क्रिया छिपाव ।
वक्र उक्ति अन्तर- कपट, सो बरनै छल-भाव ||(5)

देव ने संस्कृत लक्षण ग्रंथों का का गहन अध्ययन किया इसी कारण उनका विवेचन गंभीर एवं व्यापक है।देव ने भी पूर्ववर्ती आचार्यों की भांति अलंकार को बहुत अधिक महत्व दिया है । देव शब्द शक्ति पर चर्चा करते कहते हैं कि अभिधा शब्द शक्ति में रचित काव्य उत्तम कोटि का होता है। लक्षणा शब्द शक्ति में रचित काव्य मध्यम कोटि का और व्यंजना शब्द शक्ति में रचित काव्य निम्न कोटि का होता है। "शब्द रसायन" ग्रंथ में देव काव्य के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि, कवि के मुख से जो शब्द किसी पद वचन अर्थ को लेकर छंद,भाव,भूषण के द्वारा सरस, सुगम और हृदय ग्राही होकर हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं उसे काव्य की संज्ञा दी जाती है।आचार्य देव रसवादी आचार्य थे। इन्होंने रस को काव्य पुरुष की आत्मा माना है। देव ने श्रृंगार रस को ही मूल रस मना है और वीर, वीभत्स,अद्भुत, हास, करुण, भयानक,शांत,आदि को श्रृंगार रस के ही निहित ही स्वीकार किया है। देव ने श्रृंगार रस का सांगोपांग निरूपण रस विलास रचना में मौलिक उदाहरणों के साथ किया है।

आचार्य ने काव्य प्रयोजन के संबध में संस्कृत आचार्यों द्वारा तैयार की गई

परिपाटी को त्याग कर अपने विचारों को मौलिकता के साथ प्रतिपादित किया है। आचार्य देव ने केवल यश प्राप्ति को ही काव्य लेखन का एकमात्र उद्देश्य मना है। देव ने माधुर्य, ओज और प्रसाद तीन गुणों को ही स्वीकार किया है। इन तीनों गुणों को काव्य रीति से संबंधित बताया है । देव ने वैदरभी, पांचाली और गौड़ी रीति को काव्य रीति के रूप में मान्यता दी।संचारी भाव छल का निरूपण, नायिका भेद विवेचन, तात्पर्य शब्द शक्ति विश्लेषण, अलंकारों के उपभेदों का प्रतिपादन, आदि सभी तथ्य आचार्य देव की मौलिक प्रतिभा की ओर संकेत देते हैं। इस कारण भारतीय काव्यशास्त्र परंपरा में आचार्य देव का स्थान विशेष महत्वपूर्ण हो जाता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा में रीतिकालीन आचार्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहा उन्होंने हिंदी भाषा को समृद्ध किया। भले ही उनकी रचना में मौलिकता का अभाव है फिर भी उनके द्वारा रचित काव्य परवर्ती रीतिकालीन आचार्य के लिए प्रेरणा स्रोत बना। चिंतामणि और देव ने काव्यांग विवेचन को संस्कृत जैसी क्लिष्ट और दुरुह भाषा के जाल से निकालकर ब्रजभाषा सी सरस सुगम, हृदयग्राही भाषा में स्पष्ट कर आमजन के लिए सुलभ और पठनीय बनाया। रीतिकालीन आचार्यों का लक्षण ग्रंथ लिखने का उद्देश्य आश्रयदाताओं के कार्यों की वाहवाही करना और कवियों को काव्य के अंगों की शिक्षा देना था।

उपसंहार :–

भारतीय आचर्यों ने कवि कर्म को धर्म, अर्थ, मोक्ष, यश और काम प्राप्ति का मार्ग बताया है और कोई प्रतिभा संपन्न व्यक्ति ही अभ्यास और व्युत्पत्ति के माध्यम से सर्वश्रेष्ठ कवि की उपाधि प्राप्त कर सकता है। भारतीय काव्यशास्त्र रस और अलंकार को अधिक महत्व देते हुए काव्य की आत्मा स्वीकार करते हैं। संस्कृत आचार्यों ने रस, अलंकार, शब्द शक्ति, ध्वनि, गुण, आदि की संख्या अपने अपने ग्रंथों में अलग-अलग मानी है। चिंतामणि और देव रीतिकाल के बहुमुखी प्रतिभा संपन्न आचार्य और कवि के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं। इनकी रचनाओं में काव्यांग निरूपण, काव्य प्रयोजन, काव्य हेतु आदि का सूक्ष्म एवं विस्तार पूर्वक वर्णन मिलता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में काव्य के लक्षणों के साथ-साथ उनसे संबंधित स्वरचित कविताओं के उदाहरण भी प्रस्तुत किया ताकि पाठक को काव्य के लक्षण या सिद्धांत समझने में कठिनाई न हो। चिंतामणि की रचनाओं में अलंकार चारुता, कल्पना शक्ति का समाहार, अर्थ वैभव का सटीक समाजस्य, उदाहरणों का स्पष्ट प्रस्तुतीकरण आदि की बड़ी ही मनोहर झांकी प्रस्तुत की। चिंतामणि की रचनाएं भले ही देव से संख्या की दृष्टि में कम हों परंतु महत्व की दृष्टि से चिंतामणि को कम नहीं आंका जा सकता। चिंतामणि की रचनाओं पर पूर्ववर्ती संस्कृत आचार्य का प्रभाव परिलक्षित होता है। चिंतामणि ने ब्रज भाषा का प्रयोग करते हुए बड़ी ही सरल सहज एवं प्रवाहमयी उक्तियों का प्रयोग किया है। देव द्वारा दिए गए काव्य लक्षण और उदाहरण अत्यंत प्रौढ़ और सुव्यवस्थित है। भले ही उन्होंने तुकांत के लिए शब्दों को तोड़ मरोड़ कर वाक्य में प्रयोग किया। रीतिकाल कवि संस्कृत काव्यशास्त्रियों को उच्च और स्वयं को तुच्छ समझते थे इसी कारण किसी ने भी मौलिक उद्भावना का सूत्रपात नहीं किया।

संदर्भ ग्रंथ :–

१. नाट्यशास्त्र, भरत मुनि, भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा, संपादक डॉ नगेंद्र, पृष्ठ संख्या 17
२. हिंदी साहित्य के इतिहास, रामचंद्र शुक्ल, 1929
३. कवि कुल कल्पतरु, चिंतामणि, भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा, संपादक डॉ नगेंद्र पृष्ठ संख्या 405, नागरी प्रचारिणी सभा काशी
४. वही, पृष्ठ संख्या 404
५. भाव विलास, देव, भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा, डॉ नगेंद्र, पृष्ठ संख्या 414